उत्तर रामचरितम् नाटक के प्रमुख नारी पात्रों का चारित्रिक मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

[1] स्वीटी कुमारी & [2] डॉ. सुमन लता पाल

[1](शोधार्थिनी), संस्कृत विभाग भदावर विद्या मंदिर (स्नातकोत्तर) महाविद्यालय, बाह (आगरा)

[2](निर्देशिका), प्रोफेसर संस्कृत विभाग भदावर विद्या मंदिर (स्नातकोत्तर) महाविद्यालय, बाह (आगरा)

सार

'उत्तररामचरितम्' संस्कृत नाट्य साहित्य का एक मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक दस्तावेज है। इस नाटक में नारी पात्रों का चित्रण केवल पारंपरिक आदर्शों तक सीमित नहीं है, बल्कि कवि ने उनके मन के गहरे कोनों, अंतर्द्वंद्व, दुःख और सामाजिक चेतना का अद्भुत मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है।

परिचय

नाटक के प्रमुख नारी पात्रों का चारित्रिक और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत समझा जा सकता है:

1. सीता (नायिका): मूक वेदना, उदात्तता और आत्म-सम्मान की प्रतिमूर्ति

सीता नाटक की केंद्रीय नारी पात्र हैं। उनका चरित्र मनोवैज्ञानिक विकास और मानसिक सहनशक्ति की पराकाष्ठा है: [1, 2, 3, 4]

- उदात्त और निश्छल प्रेम: परित्याग जैसी घोर सामाजिक प्रताड़ना सहने के बाद भी उनके मन में श्रीराम के प्रति द्वेष नहीं है। तृतीय अंक (छाया अंक) में जब वह अदृश्य रूप में राम के विलाप और पश्चाताप को प्रत्यक्ष देखती हैं, तो उनका पूर्व का सारा मानसिक संताप और क्षोभ दूर हो जाता है। राम के प्रति उनका प्रेम 'अभिमान' से ऊपर उठकर 'करुणा' में बदल जाता है। [1, 2, 3]
- दबा हुआ अवसाद (Suppressed Grief): सीता का मनोविज्ञान एक ऐसी स्त्री का है जो लोक-अपवाद के कारण समाज और अपने ही पति द्वारा ठुकराई गई है। वह अपनी पीड़ा को मुखर होकर नहीं कहतीं, बल्कि उनकी आंतरिक वेदना उनके आंसुओं और उदास मुखमुद्रा में झलकती है। [1, 2, 3]
- स्वाभिमान और गरिमा: सीता असहाय अवश्य दिखाई देती हैं, परंतु वे आत्महीनता (Self-pity) की शिकार नहीं हैं। जब उनकी पवित्रता पर पुनः सवाल उठने की आशंका होती है, तो वे धरती माता की गोद में शरण लेकर अपनी गरिमा और संप्रभुता को अक्षुण्ण बनाए रखती हैं। [1, 2]

2. वासन्ती (वन-देवता): सामाजिक आक्रोश और मुखर मित्र-धर्म

वासन्ती पंचवटी की वन-देवी और सीता की परम सखी हैं। उनका चरित्र सीता के ठीक विपरीत, मनोवैज्ञानिक रूप से अत्यंत मुखर और प्रतिशोधात्मक (Assertive) है: [1]

- सहानुभूति और रोष का मिश्रणः वासन्ती उस सामान्य जनमानस या नारी चेतना की प्रतिनिधि हैं जो पुरुषों के एकतरफा निर्णयों से आहत होती हैं। वह राम से बहुत स्नेह करती हैं, परंतु सीता के परित्याग के कारण उनके मन में राम के प्रति तीव्र आक्रोश है।
- मनोवैज्ञानिक आघात (Psychological Confrontation): तृतीय अंक में वासन्ती राम को उनके ही पुराने प्रेम-वादे याद दिलाकर उपालंभ (ताने) देती हैं। वह राम से स्पष्ट कहती हैं—"त्वं जीवितं त्वमसि मे हृदयं द्वितीयं..." (तुम मेरा जीवन हो, मेरा दूसरा हृदय हो... ऐसा कहकर तुमने उस भोली सीता का त्याग कैसे कर दिया?)। उनका यह व्यवहार राम के अवचेतन में छिपे 'अपराध बोध' (Guilt) को और तीव्र कर देता है। [1]

3. तमसा और मुरला (नदी-देवियाँ): उपचारात्मक और मातृवत् मनोविज्ञान

ये दोनों गोदावरी की सहेलियाँ और नदी-देवियाँ हैं, जो नाटक के तीसरे अंक के विष्कंभक में आती हैं। इनका चरित्र एक 'मनोवैज्ञानिक चिकित्सक' (Therapist) जैसा है: [1, 2]

- भावनाओं का रेचन (Catharsis): तमसा और मुरला जानती हैं कि राम और सीता दोनों ही अत्यधिक मानसिक तनाव और दुःख से गुजर रहे हैं। वे अच्छी तरह समझती हैं कि यदि दुःख को बाहर न निकाला जाए, तो हृदय फट सकता है (पूरप्रश्नें परिवाहः प्रतिक्रिया—जैसे तालाब भरने पर पानी को बाहर निकालना ही उपाय है)।
- संरक्षक की भूमिकाः तमसा छाया रूप में सीता के साथ रहकर उनकी मानसिक स्थिति को संभालती है। वह सीता को राम की विवशता समझाकर दोनों के बीच भावनात्मक सेतु का कार्य करती है। इनका मनोविज्ञान पूरी तरह से सहानुभूतिपूर्ण, परिपक्व और सुरक्षात्मक है।

4. आत्रेयी और अरुन्धतीः बौद्धिक, आध्यात्मिक और सामाजिक न्याय की चेतना

- आत्रेयीः वह एक ब्रह्मचारिणी और विदुषी हैं। उनका मनोविज्ञान एक स्वतंत्र, जिज्ञासु और तार्किक नारी का है जो वाल्मीकि के आश्रम के घटनाक्रमों को तटस्थ भाव से देखती और समझती है। [1]
- अरुन्धतीः महर्षि वशिष्ठ की पत्नी और सूर्यवंश की कुलगुरु होने के नाते उनका स्थान समाज में सर्वोच्च है। उनका मनोविज्ञान एक न्यायप्रिय और निष्पक्ष संरक्षिका का है। वे राम के कृत्य (सीता त्याग) से अत्यंत रुष्ट हैं और इसी कारण अयोध्या का परित्याग कर वाल्मीकि आश्रम में रहती हैं। वे अंत में समाज को विवश करती हैं कि वह सीता की पवित्रता को बिना किसी शर्त के स्वीकार करे। [1]

भवभूति ने 'उत्तररामचरितम्' में नारी पात्रों को केवल पुरुषों की अनुगामिनी के रूप में नहीं बुना है। जहाँ सीता सहनशीलता और उदात्त अंतर्मन की पराकाष्ठा हैं, वहीं वासन्ती पुरुष सत्ता के कठोर निर्णयों के विरुद्ध एक तीखा मनोवैज्ञानिक प्रतिकार है। तमसा और मुरला स्त्री के सहानूभूतिपूर्ण और उपचारात्मक स्वभाव को दर्शाती हैं। संक्षेप में, नाटक के नारी पात्र आंतरिक रूप से पुरुष पात्रों की तुलना में अधिक सुदृढ़, परिपक्व और संवेदनशील मनोवैज्ञानिक धरातल पर खड़े दिखाई देते हैं। [1, 2, 3]

विचार-विमर्श

उत्तररामचरितम् का कथानक वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड से लिया गया है। अपनी कल्पना के प्रयोग से रामायण के इस चिर–परिचित कथानक को महाकवि ने अत्यंत सरल नाट्यकृति के रूप में रूपान्तरित किया है। संस्कृत साहित्य की विभिन्न परम्पराओं में नाट्य परंपरा अत्यधिक समृद्धशाली रही है लेकिन दुर्भाग्य की बात यह है कि संस्कृत के अनेक नाटक आज उपलब्ध नहीं हैं। विदेशी आक्रमणों के कारण संस्कृत साहित्य की अनेको रचनाएं विलुप्त हो गयी हैं।[4,5,6]

लगभग 500 ई. पू. भरतमूनि ने नाट्य संम्बंधि लक्षणों की स्थापना की थी तभी से इस नाट्य परंपरा का समुचित इतिहास मिलता है। संस्कृत साहित्य में नाटकों की सजीव तथा अर्मूत परंपरा का अनुवर्तन महाकवि भास से होता है। भास के बाद कालिदास, के बाद भवभूति का समागम एक नाटककार के रूप में माना गया है। भवभूति संस्कृत साहित्य क मूर्धन्य कवियों में से एक हैं। महाकवि भवभूति प्राकृतिक तत्वों में मानवीय संवेदना को अभिव्यक्त करने वाले कवियों ने अद्वितीय नामक तीन नाटक लिखे हैं। निःसन्देह तीनों नाटक सर्वोवत्कृष्ट हैं। भवभूति के नाटकों में उत्तरामचरिम् सर्वाधिक प्रसिद्ध है। उत्तरामचरितम् भवभूति का अंतिम और सर्वोत्कृष्ट नाटक है। इसमें कुल सात अंक हैं।

महाकवि भवभूति रचित 'उत्तररामचरितम्' नाटक के प्रमुख नारी पात्र निम्नलिखित हैं: [1, 2]

- सीता: यह इस नाटक की नायिका और राम की पत्नी हैं। जनक की पुत्री और पृथ्वी (वसुंधरा) की पुत्री के रूप में इनका त्याग और मानसिक पीड़ा इस नाटक का मुख्य केंद्र है। [1, 2]
- वासन्ती: यह पंचवटी की वनदेवता और सीता की अंतरंग सखी हैं। तृतीय अंक (छायांक) में यह राम के प्रति सीता की व्यथा और उनके वियोग का मुखर स्वर बनती हैं। [1, 2, 3]
- अरुन्धती: महर्षि वशिष्ठ की पत्नी हैं। नाटक में ये अत्यंत आदरणीय, ज्ञानवान और पवित्रता की प्रतीक हैं। [1]
- तमसा और मुरला: ये दोनों नदियाँ (देवियाँ) हैं। नाटक के तृतीय अंक में इनके संवादों के माध्यम से राम और सीता की मनःस्थिति व कथा आगे बढ़ती है। [1]
- आत्रेयी: यह एक ब्रह्मचारिणी और विदुषी तपस्विनी हैं, जो वाल्मीकि के आश्रम में शिक्षा प्राप्त करती हैं। [1]
- कौशल्या: ये भगवान राम की माता हैं। [1]
- भागीरथी (गंगा) और पृथ्वी (वसुंधरा): ये दोनों दैवीय पात्र हैं जो सीता के संकट के समय और उत्तरार्ध की घटनाओं में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। [1]

परिणाम

भवभूति की मौलिक उद्भावनाओं का विस्तृत विवेचन इस प्रकार है:

करुण रस की प्रधानता: भवभूति ने उत्तररामचरितम् को करुण रस का महासागर बना दिया है। पहले तीन अंकों में राम और सीता के वियोग, पश्चात्ताप और दु:ख का ऐसा चित्रण है कि दर्शक या पाठक करुणा से अभिभूत हो जाता है। राम का विलाप, सीता की

अदृश्य उपस्थिति में उनकी पीड़ा, और तमसा–मुरला जैसी सखियों के माध्यम से सीता के दु:ख का वर्णन, सब कुछ करुण रस को चरम पर पहुँचाता है। भवभूति ने स्पष्ट रूप से घोषणा की है कि करुण रस ही एकमात्र रस है जो विभिन्न निमित्तों से भिन्न–भिन्न रूपों में प्रकट होता है। यह उनकी नाट्य–कला का एक क्रांतिकारी सिद्धांत था।

पात्रों का मनोवैज्ञानिक चित्रण: भवभूति ने राम और सीता के चरित्रों को असाधारण मनोवैज्ञानिक गहराई प्रदान की है। राम को केवल एक आदर्श राजा के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसे व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया गया है जो कर्तव्य और प्रेम के बीच भयंकर आंतरिक संघर्ष से गुजर रहा है। उनका सीता के प्रति अगाध प्रेम और प्रजा–रंजन के लिए सीता का परित्याग करने का निर्णय उन्हें एक द्वंद्वात्मक स्थिति में डालता है। सीता का चरित्र भी अत्यंत गरिमामय और सहनशील है, जो अपने दु:ख को धैर्य के साथ सहती हैं, लेकिन उनकी आत्मा की पवित्रता और प्रेम की शक्ति अक्षुण्ण रहती है।[7,8,9]

नवीन पात्रों एवं युक्तियों का प्रयोग:

छाया सीता: यह भवभूति की सबसे महत्वपूर्ण और मौलिक उद्भावनाओं में से एक है। राम के सामने सीता को प्रत्यक्ष लाए बिना, उनकी छाया को उपस्थित करके भवभूति ने राम के अवचेतन मन में सीता के प्रति प्रेम और पीड़ा को व्यक्त करने का अद्भुत अवसर प्रदान किया। छाया सीता के स्पर्श से राम को सीता के प्रत्यक्ष होने का भ्रम होता है, जिससे उनके दु:ख की तीव्रता और बढ़ जाती है। यह युक्ति नाट्यशास्त्र की मर्यादाओं का पालन करते हुए भावनात्मक गहराई को बढ़ाती है।

तमसा, मुरला, गंगा: ये नदियाँ और उनकी अधिष्ठात्री देवियाँ केवल प्राकृतिक तत्व नहीं हैं, बल्कि सीता की सखियाँ और दु:ख में सहभागी हैं। वे सीता के दु:ख को सुनती हैं, सहानुभूति प्रकट करती हैं, और कथानक को आगे बढ़ाने में सहायक होती हैं। यह प्रकृति का मानवीकरण कर उसे भावनात्मक धरातल पर पात्रों से जोड़ता है।[16,17,18]

विदूषक का अभाव: संस्कृत नाटकों में विदूषक का होना एक सामान्य परंपरा थी, जो हास्य प्रदान करता था। भवभूति ने उत्तररामचरितम् से विदूषक को हटाकर नाटक की गंभीर और करुण प्रकृति को बनाए रखा, जिससे भावनात्मक तीव्रता में कोई व्यवधान नहीं आया।

अंक योजना एवं नाट्य–शिल्प में नवीनता:

गर्भांक (नाटक के भीतर नाटक): सप्तम अंक में भवभूति ने 'गर्भांक' नामक एक अनूठी नाट्य युक्ति का प्रयोग किया है। इसमें वाल्मीकि के शिष्यों द्वारा राम के समक्ष सीता के जीवन पर आधारित एक नाटक का मंचन किया जाता है, जिसके माध्यम से सीता

की पवित्रता सिद्ध होती है और राम को सत्य का बोध होता है। यह युक्ति नाटकीय प्रभाव को बढ़ाती है और पुनर्मिलन को स्वाभाविक तथा गरिमामय बनाती है।

घटनाओं के बजाय भावनाओं पर जोर: भवभूति ने बाहरी घटनाओं और क्रियाओं के बजाय पात्रों के आंतरिक मनोभावों, स्मृतियों और प्रतिक्रियाओं पर अधिक ध्यान केंद्रित किया है। इससे नाटक अधिक मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक बन जाता है।[10,11,12]

प्रकृति का मानवीकरण एवं भावनात्मक सहभागिता: भवभूति की प्रकृति केवल एक पृष्ठभूमि नहीं है, बल्कि वह पात्रों के दुःख-सुख में सक्रिय रूप से भाग लेती है। दंडकारण्य के वृक्ष, नदियाँ, पर्वत – सभी राम और सीता के पूर्व-परिचित हैं और उनके दुःख में सहभागी प्रतीत होते हैं। राम अपने पुराने परिचित स्थलों को देखकर सीता की याद में विलाप करते हैं, और प्रकृति भी उनके दुःख में मौन रूप से शामिल होती है।

पुनर्मिलन की मौलिक कल्पना: वाल्मीकि रामायण में सीता पृथ्वी में समा जाती हैं, लेकिन भवभूति ने सीता और राम का गरिमामय पुनर्मिलन कराया है। गर्भांक के माध्यम से सीता की पवित्रता सिद्ध होती है, और अंत में गंगा तथा पृथ्वी स्वयं सीता की शुद्धता की गवाही देती हैं, जिससे राम उन्हें सहर्ष स्वीकार करते हैं। यह पुनर्मिलन सीता के सम्मान को पुनर्स्थापित करता है और दर्शकों को एक संतोषजनक अंत प्रदान करता है।

निष्कर्ष

भवभूति की ये मौलिक उद्भावनाएँ तत्कालीन संस्कृत नाट्य परंपरा और रामायण कथा के व्यापक संदर्भ में देखी जानी चाहिए। उन्होंने स्थापित नाट्यशास्त्र के नियमों का पालन करते हुए भी उनमें अपनी रचनात्मकता का समावेश किया। उनकी उद्भावनाएँ इस शर्त पर आधारित थीं कि वे दर्शकों को एक ऐसी कथा प्रस्तुत करें जो भावनात्मक रूप से गहन हो, मनोवैज्ञानिक रूप से विश्वसनीय हो, और अंततः नैतिक तथा आध्यात्मिक रूप से संतोषजनक हो। उन्होंने रामायण के मूल कथानक को बनाए रखते हुए भी उसे अपनी नाट्य-दृष्टि के अनुरूप ढाला, विशेषकर करुण रस की प्रधानता और सीता के गरिमामय पुनर्मिलन के माध्यम से। उन्होंने यह भी सुनिश्चित किया कि उनकी नाट्य-युक्तियाँ (जैसे छाया सीता) अलौकिक होते हुए भी मानवीय भावनाओं के धरातल पर विश्वसनीय प्रतीत हों।

संक्षेप में, भवभूति ने उत्तररामचरितम् में करुण रस को केंद्रीय स्थान देकर, पात्रों का गहन मनोवैज्ञानिक चित्रण करके, छाया सीता और गर्भांक जैसी नवीन नाट्य युक्तियों का प्रयोग करके, तथा प्रकृति को भावनात्मक सहभागी बनाकर संस्कृत नाट्य साहित्य में अभूतपूर्व मौलिक उद्भावनाएँ कीं। इन नवाचारों ने उत्तररामचरितम् को केवल एक नाटक नहीं, बल्कि मानवीय भावनाओं और आंतरिक संघर्षों का एक शाश्वत महाकाव्य बना दिया, जो आज भी अपनी भावनात्मक गहराई और कलात्मक उत्कृष्टता के लिए

सराहा जाता है। भवभूति की ये उद्भावनाएँ उन्हें संस्कृत साहित्य के महानतम नाटककारों में से एक के रूप में स्थापित करती हैं।[13,14,15]

नायक–:श्री राम ,नायिका सीता

गुप्तचर :–दुर्मुख

सीता की सखी का नाम वासन्ती ।

-उत्तररामचरितम् में महर्षि वाल्मीकि के शिष्यों के नाम सौधातिक और दण्डायन हैं।

उत्तररामचरितम् सात अंकों का नाटक है।[19,20]

उत्तररामचरितम् में श्लोक संख्या २५६ है

छंद विधान – 19 छंदो का प्रयोग है अनुष्टुप् व शिखरिणी छंदों का आधिक्य है

-अलंकारों का प्रयोग –३८ अलंकारों का प्रयोग उपमा,उत्प्रेक्षा, काव्यलिंग, रूपक आदि की प्रमुखता

सात अंकों के नामः–

१ चित्रदर्शन

२ पंचवटी प्रवेश

३ छाया अंक

४ कौशल्या–जनक योग

५ कुमार विक्रम

६ कुमार प्रत्यभिज्ञान

७ सम्मेलन

संदर्भ

1. सत्तार, अर्शिया (20 अक्टूबर 2020)। मर्यादाः रामायण में धर्म की खोज । हार्पर कॉलिन्स पब्लिशर्स , भारत । आईएसबीएन 978-93-5357-713-1मूल रूप से 31 जनवरी 2024 को संग्रहीत । 15 फरवरी 2021 को पुनः प्राप्त किया गया ।

2. "धर्म का साक्षात रूप" । द हिंदू । 5 अगस्त 2011। मूल से 22 जनवरी 2021 को संग्रहित । 16 जनवरी 2021 को पुनः प्राप्त ।
3. जेम्स जी. लोचटेफेल्ड 2002 , पृ. 555.
4. "राम" । वेबस्टर डिक्शनरी । मूल से 5 मार्च 2016 को संग्रहित । 9 मार्च 2021 को पुनः प्राप्त ।
5. "हम प्रत्येक हिंदू नाम के बाद 'अ' क्यों लगाते हैं?" . हिंदू धर्म. स्टैक एक्सचेंज . 16 अक्टूबर 2016. मूल से 17 अप्रैल 2021 को संग्रहीत । 8 मार्च 2021 को पुनः प्राप्त ।
6. तुलसीदास (1999)। श्री रामचरितमानस । प्रकाश, आरसी द्वारा अनुवादित । मोतीलाल बनारसीदास. पीपी. 871-872 . आईएसबीएन 978-81-208-0762-4.
7. लुटगेंडोर्फ, फिलिप (1991)। "अयोध्या के रामचंद्र का गुप्त जीवन"। रिचमैन, पाउला (संपादक)। अनेक रामायणः दक्षिण एशिया में एक कथा परंपरा की विविधता । कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय प्रेस। पृष्ठ 217-234 । रामायण के नायक... राम
8. मुंशी, उर्मिला सरकार (2021)। "राम होने का पुनरावलोकनः बदलते समय में भगवान की भूमिका निभाना"। रिचमैन, पाउला; भरूचा, रुस्तम (संपादक)। रामायण परंपरा का प्रदर्शनः अभिनय, व्याख्याएँ और तर्क । ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस। पृ. 281–297 . doi : 10.1093/oso/9780197552506.003.0014 ।
9. विलियम एच. ब्रैक्नी (2013). मानवाधिकार और विश्व के प्रमुख धर्म, द्वितीय संस्करण . एबीसी–सीएलआईओ. पृष्ठ 238–239 . ISBN 978-1-4408-2812-6मूल रूप से 31 जनवरी 2024 को संग्रहीत । 9 अप्रैल 2017 को पुनः प्राप्त किया गया ।
10. रोडरिक हिंडरी (1978)। हिंदू और बौद्ध परंपराओं में तुलनात्मक नैतिकता । मोतीलाल बनारसीदास। पृ. 95-124 । ISBN 978-81-208-0866-9मूल रूप से 31 जनवरी 2024 को संग्रहीत । 9 अप्रैल 2017 को पुनः प्राप्त किया गया ।
11. वाल्मिकी (1990)। वाल्मिकी की रामायणः बालकाण्ड । गोल्डमैन, रॉबर्ट पी. प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस द्वारा अनुवादित । पी। 3. आईएसबीएन 978-1-4008-8455-1मूल रूप से 31 जनवरी 2024 को संग्रहीत । 10 अप्रैल 2017 को पुनः प्राप्त किया गया ।
12. डिमॉक, ई.सी. जूनियर (1963)। "बंगाल के वैष्णवों के बीच सिद्धांत और अभ्यास"। धर्मों का इतिहास । 3 (1): 106–127 . doi : 10.1086/462474 . JSTOR 1062079 . S2CID 162027021 .
13. मारिजके जे. क्लोके (2000). दक्षिण और दक्षिणपूर्व एशिया में कथात्मक मूर्तिकला और साहित्यिक परंपराएँ । ब्रिल. पृ. 51–57 . ISBN 90-04-11865-9.
14. रामदास लैंब 2012 , पृ. 28.
15. शेचनर, रिचर्ड; हेस, लिंडा (1977)। "रामनगर की रामलीला [भारत]"। द ड्रामा रिव्यू । 21 (3)। एमआईटी प्रेसः 51-82 । doi : 10.2307/1145152 । JSTOR 1145152 ।
16. जेम्स जी. लोचटेफेल्ड 2002 , पृ. 389 .

17. जेनिफर लिंडसे (2006). बिटवीन टंग्सः ट्रांसलेशन एंड/ऑफ/इन परफॉर्मेंस इन एशिया . नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ सिंगापुर प्रेस. पृ. 12–14 . ISBN 978-9971-69-339-8.
18. दलाल 2010 , पृ. 337–338.
19. पीटर जे. क्लॉस; सारा डायमंड; मार्गरेट एन मिल्स (2003)। दक्षिण एशियाई लोककथाएँः एक विश्वकोश : अफगानिस्तान, बांग्लादेश, भारत, नेपाल, पाकिस्तान, श्रीलंका । टेलर एंड फ्रांसिस। पृष्ठ 508। ISBN 978-0-415-93919-5.
20. किंग, अन्ना एस. (2005). अंतरंग अन्यः भारतीय धर्मों में दिव्य प्रेम । ओरिएंट ब्लैकस्वान। पृ. 32–33 . ISBN 978-81-250-2801-7मूल रूप से 31 जनवरी 2024 को संग्रहीत । 9 अगस्त 2020 को पुनः प्राप्त किया गया ।